



THE TIMES OF INDIA

Date: 13-07-26

Return To Sender

Reusable rockets have changed economics of satellite launches. For Isro, they're a necessity & an opportunity

TOI Editorials



Isro set a record in 2017 by launching 104 satellites on a PSLV rocket. Four years later, SpaceX carried 143 satellites on a Falcon 9. That is one way to make satellite launches economical. The other, harder, way is to make rockets themselves reusable. Because a rocket's first-stage booster is its costliest part, bringing it down safely, and using it again and again, knocks off the biggest chunk of the launch bill. That is SpaceX's specialty, which has made it undisputed king of the satellite launch market. On average, SpaceX sends a rocket to space every other day.

Of course, others want in on the business, so Blue Origin is developing its New Glenn rocket, and others are close behind. The latest is China, which demonstrated the reusability of its Long March 10B rocket on Friday. Japan followed with a much smaller but also successful demonstration a day later. Europe's ArianeGroup, is also accelerating development of its

Themis reusable vehicle, while Russia has plans to get its own reusable rocket ready by 2028. The reason is simple. Some 70,000 low Earth orbit satellites may be launched by 2030, of which 53,000 could be from China alone, per Goldman Sachs. Which explains the Chinese urgency to nail reusable boosters.

But other countries also want a slice of the \$18bn market, growing at 10% per year. And there are new satellite-assisted applications for which dependence on a foreign firm could be disadvantageous. For example, autonomous vehicles. That's why Honda tested its own reusable rocket in June last year. It succeeded. Who's missing in this race? India. Not long ago, Isro was known for its economical launch services, but no amount of low-cost innovation can compete with a reusable rocket, which is essentially a taxi to space. India's share in the satellite launch market has slipped below 2%, and as TOI reported on Saturday, its plans to make a Next Generation Launch Vehicle, or NGLV, have not entered the final design and testing stage. Considering that SpaceX took 15 years to perfect its reusable rocket tech, India has no time to lose now.

THE ECONOMIC TIMES

Date: 13-07-26

Serving the Economic Cause of Services

Can provide policy direction with caveats

ET Editorials

Ministry of statistics and programme implementation (MoSPI) has scheduled to launch a trial index of services production (ISP) — on the lines of the index of industrial production — tomorrow. It should offer a high-frequency snapshot of economic activity despite its many shortcomings. Indices for service are more complex to build than for physical factory output. Which is why most countries go about assessing health of the services sector in a roundabout way. India will join a select group of countries that attempts a direct estimation despite methodological challenges. Improving datasets inspires confidence in the venture, and the readings can provide direction to policy with appropriate caveats in place.

The foremost being exclusion of the informal economy, which, in India's case, has a large contribution to output. Retailing is a case in point, and it will have one of the highest weights in the index. Yet, data capture can only improve as the sector formalises. Even otherwise, the formal and informal segments operate in conjunction. On the other hand, the heaviest weight in the index will go to the IT sector, where measurements are precise. Another complication in devising a services index is the lack of specific price deflators. Workarounds are available through proxies that best suit a particular service. Wholesale trade will be deflated by WPI, while banking will use CPI. The degree of precision will vary because of the price deflator.

Finally, there are outright exclusions — health, education, defence and government services. These are big chunks of the services sector that are being kept out till methods are available for realistic assessment. The index is likely to provide a sense of direction, rather than a measure of distance travelled. To that extent, it should aid navigation. The statistics will, of course, have to undergo continuous improvement for real-time economic analysis. GoI deserves credit for setting the ball in motion on an ambitious undertaking.



Date: 13-07-26

चीन के लिए भारत का जवाब

सृजन पाल सिंह, (लेखक कलाम सेंटर के संस्थापक और पूर्व राष्ट्रपति डा. एपीजे अब्दुल कलाम के सलाहकार रहे हैं)

प्रधानमंत्री नरेन्द्र मोदी ने गत सात जुलाई को जकार्ता में इंडोनेशिया के राष्ट्रपति प्रबोवो सुबियांतो ने कुछ ऐसे समझौतों पर हस्ताक्षर किए, जिनकी गूँज बीजिंग तक सुनाई पड़ी होगी। पहला समझौता सुमात्रा के उत्तरी छोर पर बसे सबांग बंदरगाह को मिलकर विकसित करने का है। दूसरा, लगभग 5,400 करोड़ रुपये का ब्रह्मोस मिसाइल सौदा, जिसके साथ इंडोनेशिया, फिलीपींस और वियतनाम के बाद इस स्वदेशी सुपरसोनिक मिसाइल का तीसरा खरीदार बन गया। बुनियादी रूप से ये व्यापार और रक्षा के समझौते हैं, लेकिन मानचित्र पर देखें तो यह हिंद महासागर की सबसे महत्वपूर्ण शतरंज की बिसात पर भारत की एक सधी हुई चाल है और इस बिसात का केंद्र है-मलक्का स्ट्रेट। मलक्का स्ट्रेट वस्तुतः मलेशिया और इंडोनेशिया के सुमात्रा द्वीप के बीच फैली लगभग 900 किलोमीटर लंबी संकरी समुद्री गली है, जो प्रशांत महासागर और हिंद महासागर को जोड़ती है। अपने सबसे संकरे बिंदु पर इसकी चौड़ाई मात्र ढाई-तीन किलोमीटर रह जाती है। इसी संकरे रास्ते से हर साल 80 हजार से अधिक जहाज गुजरते हैं। यानी रोजाना दो सौ से अधिक जहाजों की आवाजाही इस मार्ग से होती है। इस तरह, दुनिया के समुद्री व्यापार का लगभग एक-चौथाई हिस्से में इसी जलमार्ग की भागीदारी है। इस तरह लगभग साढ़े तीन लाख करोड़ (ट्रिलियन) डालर का माल हर साल यहीं से होकर जाता है। तुलनात्मक रूप से देखें तो मलक्का से गुजरने वाला सालाना व्यापार लगभग भारत की संपूर्ण अर्थव्यवस्था के बराबर है।

इस संकरी समुद्री गली पर सबसे अधिक निर्भरता किसकी है? इसका जवाब है चीन की निर्भरता सर्वाधिक है। चीन का लगभग 80 प्रतिशत आयातित कच्चा तेल और व्यापार का बड़ा हिस्सा मलक्का स्ट्रेट से होकर गुजरता है। इसे लेकर बीजिंग की चिंता इतनी गहरी है कि 2003 में चीन के तत्कालीन राष्ट्रपति हू जिंताओ ने इसे 'मलक्का दुविधा' का नाम तक दे दिया था। चीन ने इस दुविधा से निकलने के लिए म्यांमार और पाकिस्तान में पाइपलाइन बिछाई, बेल्ट एंड रोड के नाम पर अरबों डालर झोंके, परंतु सच्चाई यही है कि मलक्का समुद्री मार्ग का कोई कारगर एवं ठोस विकल्प आज भी उसके पास नहीं है। मलक्का चीनी अर्थव्यवस्था की वह नस है, जिस पर हल्का सा दबाव भी बीजिंग की धड़कनें बढ़ा देता है। ऐसे में यह प्रश्न बहुत महत्वपूर्ण हो जाता है कि जो गली चीन की दुखती रग है, वह भारत के लिए इतनी बड़ी रणनीतिक ताकत कैसे बन सकती है? इसका उत्तर तीन स्तरों पर सामने आता है।

पहला स्तर है संतुलन का। पिछले कुछ वर्षों में चीन ने भारत पर दबाव बनाने के कई मोर्चे खोले हैं। जैसे कि गलवन जैसी सीमा पर झड़पें, 100 अरब डालर से अधिक का व्यापार घाटा और दुर्लभ खनिजों तथा दवा उद्योग के कच्चे माल की आपूर्ति रोकने की धमकियां। हिमालय की ऊंचाइयों पर और बाजार के मैदान में चीन का पलड़ा भले ही भारी दिखता है, लेकिन मलक्का के मुहाने पर स्थिति ठीक उलट है। यहां भूगोल भारत के साथ खड़ा है। किसी भी तनाव या संघर्ष की स्थिति में मलक्का के आसपास भारतीय नौसेना की मजबूत उपस्थिति चीन की ऊर्जा एवं व्यापार की जीवनरेखा पर ग्रहण लगा सकती है। यही अंकुश हिमालय से लेकर व्यापार तक, हर दूसरे मोर्चे पर चीन को संयम बरतने पर मजबूर करता है। रणनीति की भाषा में यही 'प्रतिरोधक क्षमता' है-युद्ध जीतने के लिए नहीं, युद्ध रोकने के लिए।

दूसरा स्तर है भूगोल को अवसर में बदलने का। प्रकृति ने भारत को अंडमान-निकोबार के रूप में मलक्का के दरवाजे की चौकी पहले से दे रखी है। ग्रेट निकोबार द्वीप मलक्का के व्यापारिक मार्ग से करीब 70 से 75 किलोमीटर दूर है। इस मोर्चे पर लगभग 72,000 करोड़ रुपये की ग्रेट निकोबार परियोजना बहुत कारगर हो सकती है। इस परियोजना के अंतर्गत गैलेथिया खाड़ी में देश का 13वां प्रमुख बंदरगाह आकार ले रहा है, जिसे इसी वर्ष फरवरी में नेशनल ग्रीन ट्रिब्यूनल से भी हरी झंडी मिल गई। वर्ष 2028 तक इसके पहले चरण में 40 लाख कंटेनर सालाना संभालने की क्षमता होगी। व्यापक रूप से देखा जाए तो यह केवल सामरिक नहीं, अपितु एक बड़ा आर्थिक अवसर भी है। आज भारत का लगभग 75 प्रतिशत ट्रांसशिपमेंट कार्गो कोलंबो और सिंगापुर जैसे विदेशी बंदरगाहों से होकर जाता है। ऐसे में, गैलेथिया के माध्यम से वह कमाई भारत की झोली में आ सकती है। यही देश की एकमात्र त्रि-सेवा कमान भी है, जो हमारी सैन्य निगरानी का आधार है।

तीसरा स्तर है साझेदारियों का और यही सबांग की अहमियत समझ आती है। सबांग ग्रेट निकोबार से मात्र 160 किलोमीटर दूर मलक्का के उत्तरी मुहाने पर स्थित है। ग्रेट निकोबार और सबांग को मिलाकर देखें तो मलक्का के प्रवेश द्वार के दोनों किनारों पर भारत की उपस्थिति बनती है। यह उपस्थिति किसी पर थोपी नहीं गई, बल्कि इंडोनेशिया जैसे साझेदार के आमंत्रण से बनी है। ब्रह्मोस सौदे इसी विश्वास की कड़ी हैं। भरोसे की इसी कड़ी के चलते फिलीपींस, वियतनाम और अब इंडोनेशिया यानी दक्षिण चीन सागर में चीन की दादागीरी झेल रहे तीनों प्रमुख देश आज भारतीय मिसाइलों से अपनी सुरक्षा मजबूत कर रहे हैं। चीन की घेराबंदी का जवाब भारत गोलबंदी से नहीं, भरोसेमंद मित्रता से दे रहा है।

लगभग एक हजार वर्ष पहले चोल सम्राट राजेंद्र चोल के जहाजी बेड़े इन्हीं समुद्रों को पार कर सुमात्रा तक पहुंचे थे। समुद्र की शक्ति को समझना हमारी सभ्यता की पुरानी सीख है, जिसे हमने बीच की सदियों में भुला दिया था। मलक्का स्ट्रेट आज हमें वही पाठ दोबारा पढ़ा रहा है कि 21वीं सदी में भारत की सुरक्षा की सीमाएं हिमालय से अधिक समुद्र की लहरों पर निर्भर करेंगी। आवश्यकता बस इस बात की है कि निकोबार से सबांग तक शुरू हुए इन प्रयासों को हम राष्ट्रीय प्राथमिकता बनाकर पूरी गति से आगे बढ़ाएं।

Date: 13-07-26

ईंधन में आत्मनिर्भर बनाएगा एथनॉल

डॉ. रोहित यादव, (लेखक नरसी मोंजी इंस्टीट्यूट ऑफ मैनेजमेंट स्टडीज, मुंबई में असिस्टेंट प्रोफेसर हैं)



आजादी के बाद भारत में कुछ ऐसे फैसले हुए हैं, जिन्होंने देश की तस्वीर बदल दी। हरित क्रांति ने हमें अनाज में आत्मनिर्भर बनाया। अब सरकार का एथनॉल कार्यक्रम का मकसद है ईंधन में आत्मनिर्भरता। भारत हर साल कच्चे तेल के आयात पर सात लाख करोड़ रुपये से ज्यादा खर्च करता है। यह पैसा विदेश जाता है, हमारी अर्थव्यवस्था पर बोझ बढ़ता है और हम दूसरे देशों पर निर्भर रहते हैं। जब खाड़ी देशों में तनाव होता है, तब कच्चे तेल के दाम बढ़ते हैं और उसकी मार सीधे आम भारतीय की जेब पर पड़ती है।

सरकार का एथनॉल मिशन इसी निर्भरता को तोड़ने की कोशिश है। सरल शब्दों में कहें तो अपने गन्ने से, अपने खेतों से, अपना ईंधन बनाओ। इसी दिशा में हाल में केंद्र सरकार ने 22 प्रतिशत, 25 प्रतिशत, 27 प्रतिशत और 30 प्रतिशत एथनॉल मिले पेट्रोल पर एक्साइज ड्यूटी हटा दी। इसका सीधा मतलब है कि अब ज्यादा एथनॉल वाला पेट्रोल बनाना सस्ता होगा। इसके साथ सरकार ने 100 प्रतिशत एथनॉल को भी कानूनी मान्यता दे दी है। जब 2018 में यह योजना शुरू हुई थी, तब पेट्रोल में एथनॉल की मात्रा पांच प्रतिशत से भी कम थी। 2023-24 में यह बढ़कर 15 प्रतिशत से अधिक हो गई। आज पेट्रोल में 20 प्रतिशत एथनॉल (ई-20 ईंधन) मिलाया जा रहा है। ई-20 के राष्ट्रीय स्तर पर लागू होने से सालाना करीब 30,000 करोड़ रुपये का आयात बिल कम होने का अनुमान है।

एथनॉल बनाने के लिए भारत के पास पर्याप्त संसाधन हैं। आज ज्यादातर एथनॉल गन्ने के शीरे और खराब या अतिरिक्त अनाज से बनाया जाता है, लेकिन भविष्य में इसके लिए और भी कई स्रोत उपलब्ध हैं। बांस, पराली, फसल कटाई के बाद खेतों में बचा हुआ अवशेष और नगरों से निकलने वाले कुछ प्रकार के कचरे से भी एथनॉल बनाया जा सकता है। इसे दूसरी पीढ़ी का एथनॉल कहा जाता है। इसके लिए खाने-पीने की फसलों का उपयोग नहीं होता, इसलिए खाद्य सुरक्षा पर कोई असर नहीं पड़ता। सरकार भी ऐसी परियोजनाओं को बढ़ावा दे रही है, जिससे भविष्य में एथनॉल की पर्याप्त आपूर्ति सुनिश्चित की जा सके। इसका सबसे बड़ा फायदा किसानों को मिला है। उत्तर प्रदेश, महाराष्ट्र और बिहार के गन्ना किसान लंबे समय से कम दाम और चीनी मिलों से भुगतान में देरी जैसी समस्याओं का सामना कर रहे थे। एथनॉल योजना ने इस स्थिति को बदलना शुरू कर दिया है। अब सरकार की गारंटी के साथ डिस्टिलरी एथनॉल खरीदती है, जिससे चीनी मिलों को अतिरिक्त आय का स्रोत मिला है। इसका लाभ किसानों तक भी पहुंच रहा है और उन्हें समय पर भुगतान मिल रहा है। पर्यावरण की बात करें तो एथनॉल मिश्रित पेट्रोल से धुआं कम निकलता है। गाड़ियों से निकलने वाले हानिकारक कण और कार्बन मोनोआक्साइड की मात्रा घटती है।

अब सवाल उठता है, अगर एथनॉल की मात्रा बढ़ती जाएगी तो आने वाली गाड़ियां कैसी होंगी? इसका जवाब है फ्लेक्स फ्यूल वाहन। ये गाड़ियां पेट्रोल, एथनॉल या दोनों के किसी भी मिश्रण पर चल सकती हैं। इनमें स्मार्ट इंजन होता है, जो खुद समझ लेता है कि टंकी में कौन सा ईंधन है और उसी हिसाब से काम करता है। यही फ्लेक्स फ्यूल की असली खूबी है। मारुति की वैगन-आर का फ्लेक्स फ्यूल माडल बाजार में आ चुका है। इसमें

एथनॉल सेंसर, बेहतर फ्यूल इंजेक्शन सिस्टम और जंग-रोधी पुर्जे लगे हैं, जो ज्यादा एथनॉल को झेल सकें। ई-20 को लेकर सबसे अधिक चर्चा माइलेज पर होती है। हाल में केंद्रीय सड़क परिवहन एवं राजमार्ग मंत्री नितिन गडकरी ने भी स्वीकार किया कि एथनॉल का कैलोरी मान पेट्रोल से कम होने के कारण ई-20 ईंधन पर माइलेज में मामूली कमी आ सकती है। हालांकि यह प्रभाव सामान्य परिस्थितियों में सीमित रहता है और ई-20 के कारण वाहनों को भी किसी प्रकार की क्षति होने का कोई प्रमाण नहीं मिला है। फ्लेक्स-फ्यूल इंजनों के लिए किए गए परीक्षणों में भी माइलेज दक्षता पर कोई गंभीर प्रभाव नहीं पाया गया। अगर एथनॉल मिश्रित ईंधन पेट्रोल से 20-25 प्रतिशत सस्ता मिले तो क्या उसकी बचत कम माइलेज की कमी को पूरा नहीं कर देगी?

ब्राजील को दुनिया में एथनॉल के सबसे बड़े और सबसे पुराने उपयोगकर्ताओं में गिना जाता है। वहां दशकों से एथनॉल का इस्तेमाल बड़े पैमाने पर हो रहा है। भारत भी अब इसी दिशा में तेजी से आगे बढ़ रहा है, लेकिन अपनी परिस्थितियों और जरूरतों के अनुसार। भारत के पास विशाल वाहन बाजार, पीएम गति शक्ति जैसा डिजिटल ढांचा और इस बदलाव को आगे बढ़ाने की मजबूत राजनीतिक इच्छाशक्ति है। आम लोगों को इस बदलाव को लेकर चिंता करने की जरूरत नहीं है। आने वाले समय में यह न केवल पर्यावरण के लिए बेहतर होगा, बल्कि ईंधन की लागत कम होने पर जेब के लिए भी फायदेमंद साबित हो सकता है। एथनॉल सम्मिश्रण आज की जरूरत है, फ्लेक्स फ्यूल वाहन कल की तैयारी है और दोनों मिलकर भारत को उस मंजिल तक ले जाएंगे, जहां हमारा ईंधन विदेश से नहीं, अपने खेतों से आएगा। यह सिर्फ एक नीति नहीं, यह एक नया सोच है और देश को इसका स्वागत करना चाहिए।

बिज़नेस स्टैंडर्ड

Date: 13-07-26

ऊर्जा चुनौतियों के लिए स्थायी जरूरी उपाय

रंजन मथाई, (लेखक पूर्व राजनयिक हैं)

वर्ष 1990 में खाड़ी क्षेत्र में हुए युद्ध के कारण भारत में गंभीर तेल संकट उत्पन्न हुआ, जिसने 1991 के वित्तीय संकट को जन्म दिया। इस वर्ष की शुरुआत में ईरान पर अमेरिका-इजरायल हमले के कारण हुए व्यवधान से अब तक कम नुकसान हुआ है। भारत की अर्थव्यवस्था अब कहीं अधिक मजबूत है, और तेल की कीमतें भी पहले की तरह लंबे समय तक उच्च स्तर पर नहीं रही हैं। वैसे तेल आयात पर निर्भरता 1990 में 50 फीसदी से कम से बढ़कर अब लगभग 90 फीसदी हो जाने के कारण जोखिम बना हुआ है।

युद्ध शुरू होने पर होर्मुज स्ट्रेट के बंद होने से प्रतिदिन लगभग 150-200 लाख बैरल (एमबीडी) तेल अवरुद्ध हो गया, जो वैश्विक स्तर पर व्यापार किए जाने वाले तेल का लगभग 20 फीसदी था। हालांकि, शुरुआत में ईरान द्वारा केवल खाड़ी अरब देशों से होने वाले निर्यात को अवरुद्ध किया गया था, जबकि प्रतिदिन लगभग 15 लाख बैरल ईरानी तेल चीन के ग्राहकों को भेजा जाता रहा, जो अमेरिकी प्रतिबंधों से अप्रभावित थे। मार्च के मध्य में अंतरराष्ट्रीय ऊर्जा एजेंसी के सदस्य देशों ने रणनीतिक भंडारों से 40 करोड़ बैरल तेल की समन्वित निकासी की व्यवस्था की। सऊदी अरब ने लाल सागर तक जाने वाली पाइपलाइनों का तेजी से नवीनीकरण और पुनः संचालन किया। संयुक्त अरब अमीरात द्वारा अरब सागर पर स्थित टर्मिनलों के उपयोग से वैकल्पिक निकास मार्गों पर बमबारी के ईरानी प्रयासों के बावजूद, विश्व बाजारों में प्रतिदिन लगभग 50-70 लाख बैरल तेल की आपूर्ति फिर से शुरू हो गई। अप्रैल के मध्य में अमेरिकी नौसेना द्वारा ईरानी बंदरगाहों की सफल 'जवाबी-नाकाबंदी' से ईरान के निर्यात पर रोक लगने के बाद तेल की कीमतों में फिर से तेजी से वृद्धि हुई। लेकिन तब तक, दुनिया के सबसे बड़े आयातक चीन ने अपने विशाल रणनीतिक भंडारों से तेल निकालना शुरू कर दिया था और तेल आयात में हर दिन 40 लाख बैरल से अधिक की कमी कर दी थी। चीन से मांग में कमी के कारण भारत सहित सभी आयातकों के लिए कीमतों में और अधिक उछाल नहीं आई। शांति वार्ता में प्रगति के बारे में अमेरिकी राष्ट्रपति डॉनल्ड ट्रंप के बार-बार किए गए दावे भी तेल बाजार की भावना को संतुलित करने के उद्देश्य से प्रतीत होते थे।

इस बार तेल संकट से निपटने के लिए भारत की तैयारी स्पष्ट रूप से बेहतर साबित हुई। आयात स्रोतों के विविधीकरण ने यह सुनिश्चित किया कि कच्चे तेल की खेप भारत के बंदरगाहों पर लगातार पहुंचती रहे। वर्ष 1990 के विपरीत, अब हमारे पास कुछ हफ्तों के लिए पर्याप्त स्टॉक है, जो अधिकतर भारत की विश्वस्तरीय शोधन कंपनियों के वाणिज्यिक भंडार में है, और रणनीतिक भंडार से एक सप्ताह से अधिक की आवश्यकता पूरी हो सकती है। लेकिन हमारी ऊर्जा समस्याएं केवल तेल तक ही सीमित नहीं हैं। ये तरलीकृत प्राकृतिक गैस (एलएनजी) और तरलीकृत पेट्रोलियम गैस (एलपीजी) तक भी फैली हुई हैं। लगभग आधी एलपीजी आयात की जा रही थी, जिसमें से अधिकांश खाड़ी देशों से आती थी। पिछले दशक में, बढ़ती मांग के कारण आयात क्षमता लगभग तीन गुना बढ़ गई है। अमेरिका से आने वाली वैकल्पिक एलपीजी आपूर्ति से आपूर्ति में आई कमी पूरी नहीं हो सकी। तब सरकार ने एलपीजी नियंत्रण आदेश लागू किया, जिसके चलते तेल रिफाइनरियों ने एलपीजी उत्पादन को अधिकतम करने के लिए तकनीकी दक्षता का भरपूर इस्तेमाल किया। आधिकारिक आंकड़ों के अनुसार, एलपीजी का उत्पादन 35,000 टन से बढ़कर 54,000 टन प्रतिदिन हो गया। इससे प्रोपीलीन जैसे पेट्रोकेमिकल उत्पादन में कमी आई, जिससे रासायनिक उद्योगों पर असर पड़ा, लेकिन घरेलू आपूर्ति काफी हद तक सुरक्षित रही।

सरकार ने प्रशासनिक उपायों के जरिये एलपीजी और पेट्रोल की कीमतों को भी नियंत्रण में रखा। इससे तेल विपणन कंपनियों को भारी नुकसान हुआ है। वित्त मंत्रालय ने कंपनियों को राहत देने के लिए पेट्रोल पर उत्पाद शुल्क में कमी की घोषणा की है, जिससे सरकारी खजाने पर भारी असर पड़ेगा। युद्धविराम से तेल की कीमतों में गिरावट आने से राहत मिली। हालांकि, अब ऊर्जा सुरक्षा को राष्ट्रीय प्राथमिकता देनी होगी। सबसे पहला काम

भारत की आयात पर निर्भरता को कम करना है, जिसके लिए सरकार के समग्र प्रयासों से घरेलू तेल और गैस उत्पादन बढ़ाना आवश्यक है। पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय की सराहनीय पहल अपने आप में अपर्याप्त हैं। यदि तेल उद्योग विकास उपकर (जिसका उपयोग तेल उद्योग विकास के लिए नहीं किया जाता) को हटा दिया जाए, तो ओएनजीसी का अन्वेषण बजट दोगुना हो सकता है! नियामक और कानूनी मुद्दे जो अंतरराष्ट्रीय तेल कंपनियों को भारत के अन्वेषण क्षेत्र से दूर रखते हैं, उनका समाधान करना होगा।

रणनीतिक पेट्रोलियम भंडारों में काफी वृद्धि करनी होगी। चीन के पास रणनीतिक और वाणिज्यिक भंडारों में 1 अरब बैरल से अधिक का भंडार है, जो हमारे वर्तमान भंडारों से 10 गुना अधिक है। एलपीजी और प्राकृतिक गैस के लिए अतिरिक्त क्रायोजेनिक भंडारण टैंक विभिन्न स्थानों पर विकसित किए जाने चाहिए। भारत में कोयले का गैसीकरण चीन की तुलना में 5 फीसदी से भी कम है, और इसके लिए केवल नीतिगत घोषणाओं की नहीं, बल्कि कार्यान्वयन में प्राथमिकता की आवश्यकता है। चीन द्वारा क्षेत्रीय पहल शुरू करने से पहले, हमें अपने आसपास के देशों की ईंधन सुरक्षा के लिए सक्रिय दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। श्रीलंका के बहुचर्चित त्रिंकोमाली तेल भंडार में 80 लाख बैरल से अधिक तेल का भंडारण किया जा सकता है, जो देश की लगभग दो महीने की जरूरतों को पूरा करने के लिए पर्याप्त है। श्रीलंका पेट्रोल और डीजल की बिक्री में भारी कटौती करके 2022 जैसे आर्थिक संकट से बाल-बाल बचा है। त्रिंकोमाली भंडार के पुनर्विकास के लिए एक सहयोगात्मक परियोजना श्रीलंका और मालदीव दोनों के लिए बफर स्टॉक प्रदान कर सकती है, और भारत में स्थानीय आपातकालीन आवश्यकताओं को पूरा कर सकती है। ऊर्जा परिवर्तन की दिशा में दशकों के प्रयासों के बावजूद, तेल आने वाले कुछ दशकों तक सभी देशों के लिए ऊर्जा का महत्वपूर्ण स्रोत बना रहेगा। हम होर्मुज स्ट्रेट को बंद करने वाले किसी भी युद्ध को ध्यान में रखते हुए तैयारी करनी होगी।